REVIEW OF RESEARCH
IMPACT FACTOR : 5.2331(UIF) UGC APPROVED JOURNAL NO. 48514 ISSN: 2249-894X
VOLUME - 7 | ISSUE - 7 | APRIL - 2018

अम्बेडकर के दर्शन में सामाजिक न्याय

अनुपमा केशरवानी
शोध छात्रा, राजनीति विज्ञान विभाग ,
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद।

प्रस्तावना :

वलेरियन रोड्रिग्स के निबन्ध 'अम्बेडकर ऐज ए पोलिटिकल फिलासफर्स' में अम्बेडकर को एक राजनीतिक दार्शनिक के रूप में प्रस्तुत किया गया है। वलेरियन अपने लेख में उन मुद्दो को उजागर करते हैं, जिसके लिए अम्बेडकर जीवन भर संघर्ष करते रहे। इन मुद्दो में न्याय, स्वंतत्रता, समानता, समुदाय, लोकतंत्र, सत्ता व वैधता प्रमुख है। अम्बेडकर के सामाजिक न्याय के विचार में राजनीतिक एवं आर्थिक न्याय भी परिलक्षित होते है। अम्बेडकर वंचितों के सामाजिक उत्थान को प्राथमिकता देते थे। उनका मानना था कि जाति व्यवस्था, साम्प्रदायिकता एवं पितृसत्ता रूपी शोषण असमानता को पैदा करते है जो सामाजिक न्याय के मार्ग में बाधा उत्पन्न करते है। इस प्रकार उनके दर्शन में सामाजिक न्याय की आधारशिला स्वतंत्रता, समता व बन्धुत्व है।

यह सत्य है कि दलित समाज से होने के कारण अम्बेडकर को प्रारम्भ से ही सामाजिक अपमान का सामना करना पड़ा। उन्होंने इस अपमान को उच्च शिक्षा ग्रहण कर धोने का प्रयास किया और दलित समाज को सामाजिक अपमान से मुक्त कराने का महान बीड़ा भी उठाया। उन्होनें संकल्प किया कि जिस समाज में पैदा हुआ हूँ उस समाज की गुलामी नष्ट करने एवं अछूतो को उनका अधिकार दिलानें में यदि मै विफल हुआ तो खुद पर गोली चला दूंगा।[1] उन्होंने 9 मई, 1916 को गोल्डन वाइजर द्वारा आयोजित कोलम्बिया विश्वविद्यालय में नृ–विज्ञान पर भारत में जाति प्रथा, संरचना, उत्पत्ति और विकास पर शोध प्रबन्ध के माध्यम से जाति प्रथा को समाज का कलंक माना।[2] उन्होंने इस बुराई को समाप्त करने हेतु उन धार्मिक धारणाओं को नष्ट करने की बात कही जिन पर जाति प्रथा की नींव रखी गयी थी।[3] उन्होंने पहली बार अपने चिंतन के द्वारा यह सिद्ध किया कि अछूत कानूनी तौर पर हिन्दू जरूर है किन्तु व्यावहारिक तौर पर वे हिन्दू नहीं है। हिन्दुओं और अछूतो के बीच बुनियादी तौर पर बैर को सिद्ध करने के लिए अछूतपन की पद्धति ही काफी थी।

सामाजिक न्याय के अपने प्रथम चरण में डॉ. आम्बेडकर अछूत समुदायों को हिन्दू समाज में एक स्थान दिलानें के लिए संघर्षरत दिखते है। इस क्रम में उन्होंने मन्दिर प्रवेश, सार्वजनिक कुओं और तालाबों पर अछूतों का प्रवेश, सहभोज और वैदिक रीति से वैवाहिक कार्यक्रम सम्पन्न कराते हुए दिखते है। उन्होंने एक विवाह जो कि महार जाति से ही सम्बन्धित था, में वैदिक रीति–रिवाज का अनुसरण किया। इस विवाह में ब्राम्हण को बुलवाया गया था तथा महार जाति की परम्परागत रीति–रिवाजों को त्याग दिया गया।[4] इसी प्रकार सामाजिक न्याय के तहत उन्होंने सामूहिक रूप से यज्ञोपवीत धारण कराने के समारोह भी आयोजित करवाये। 'बहिष्कृत हितकारिणी सभा' के माध्यम से कराये गये इन कार्यो का संकीर्ण मानसिकता वाले हिन्दुओं द्वारा व्यापक विरोध किया गया।

वास्तव में अम्बेडकर का मानना था कि हिन्दू धर्म अस्पृश्यता और वर्ण–व्यवस्था जैसी असमानता पर आधारित समाज है। इस समाज की नींव जातिवाद है,[5] जो समाज के लिए असमानता की जड़ है। वे एक वर्ग विहीन समाज की स्थापना के हिमायती थे, जिसमें अमीरी–गरीबी या जाति आधारित समुदायों का देश न हो तथा प्रत्येक व्यक्ति को अपने सर्वोत्तम विकास का अवसर मिल सके। उन्होंने मार्क्सवाद के गहन अध्ययन में पाया कि मार्क्सवाद भारतीय परिवेश में समायोज्य नहीं है। इस संदर्भ में उन्होंने बौद्ध दर्शन की तुलना मार्क्सवाद

से की। बौद्ध दर्शन की ही भॉति उन्होंने भी सभी शोषण का अंत करते हुए, उत्पादन के साधनों पर उत्पादक के अधिकारों की वकालत की। अम्बेडकर के सम्मुख सबसे बड़ा प्रश्न सामाजिक संरचना में परिवर्तन का था। वे असमानता पर आधारित व्यवस्था का यथाशीघ्र परिवर्तन चाहते थे। अतः उन्होंने इसके लिए बौद्ध धर्म को एक विकल्प के रूप में चुना जिसमें जातिवाद, भेदभाव या वर्गीय चेतना नहीं थी। यहां सिर्फ करूणा पर आधारित मावनता थी, परस्पर प्रेम या सौहार्द था और सबके समुचित विकास की सर्व समावेशी व्यवस्था थी।

डॉ. अम्बेडकर के सामाजिक न्याय की छवि उनके राष्ट्रवाद सम्बन्धी अवधारणा में भी परिलक्षित होती है। उनके सामाजिक न्याय का व्यवहारिक स्वरूप राष्ट्रवाद व भारत की स्वतंत्रता में दिखा। उनके अनुसार भारत की स्वतंत्रता का अर्थ भारत में समस्त जाति, धर्म के लोगों की स्वतंत्रता होना चाहिए। किसी एक विशेष प्रभुत्व सम्पन्न जाति, वर्ग सांमतकारी लोगों के हाथों में सत्ता का हस्तानान्तरण नहीं होना चाहिए। भारत की आजादी के पूर्व दलितों की आजादी आवश्यक है जो दोहरी गुलामी से ग्रस्त है। एक तो अंग्रेजी की गुलामी और दूसरी यहां के उच्च जाति के लोगों की गुलामी।[6]

इस प्रकार अम्बेडकर का सामाजिक न्याय हिन्दू समाज में सुधार हेतु प्रवर्तित था। यद्यपि यह भी सत्य है कि अम्बेडकर के सामाजिक न्याय का व्यावहारिक रूप स्वतंत्रता के बाद उनके द्वारा रचित भारतीय संविधान व अश्पृश्यता निवारण कानून में परिलक्षित तो हुआ किन्तु कानूनी ढ़ाचे को लागू करने वाले सवर्ण ही थे। फलतः उनके द्वारा इसकी अनदेखी ही की गयी जिसमें वांछित सफलता नहीं मिल सकी फिर भी अम्बेडकर का यह चिन्तन आगे चलकर दलित जागृति का एक माध्यम बना।

अतः यह कहा जा सकता है कि अम्बेडकर के समतावादी न्याय का दर्शन समाज के वंचित लोगों के फायदे के लिए समान वर्ताव की अनुमति देती है जो जॉन रावल्स के 'निष्पक्षता के रूप में न्याय' से मेल खाता है। अम्बेडकर अधिकारों और कानूनों को न्याय की चाबी के रूप में स्वीकार करते है। उनका दर्शन इस बात का हिमायती है कि राजनीतिक व आर्थिक पुनर्निमाण से पहले समाज का सामाजिक पुनर्निमाण होना जरूरी है क्योंकि उनके अनुसार सामाजिक न्याय अन्ततोगत्वा राजनीतिक व आर्थिक न्याय का मार्ग खोलेगा। हमारा समाज अम्बेडकर की न्याय की संकल्पना को अपना नही पाया क्योंकि उसने जाति व्यवस्था व पितृसत्ता से अपने आप को मुक्त करने से इंकार कर दिया है।

अतः अम्बेडकर के सामाजिक दर्शन में सामाजिक न्याय की अवधारणा सभी के द्वारा आत्मसात की गयी जिसके परिणाम स्वरूप ही सामाजिक न्याय की दिशा में न केवल सरकार द्वारा वरन् समाज सुधारकों द्वारा प्रयास किया गया।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. कीर, धनंजय *''डॉ. बाबासाहब आंबेडकर : जीवन चरित्र''*, पापुलर प्रकाशन बंबई, 1964 पृ0 498।
2. *''बाबा साहेब अम्बेडकर : सम्पूर्ण वाड.मय''* खण्ड–1, पृ0 29।
3. वही, पृ0 29–31।
4. खैरमोड़े, चांगदेव भवानराव *''बाबा साहब डॉ. अम्बेडकर : जीवन और चिंतन''*, खण्ड 1, बंबई, 1965, पृ0 96।
5. गुप्त, विश्व प्रकाश व गुप्त, मोहिनी *''भीमराव अम्बेडकर : व्यक्ति और विचार''*, राधा पब्लिकेशन, दिल्ली, 1997, पृ0 44।
6. सेठ, कैलाश चन्द व नैमिसारण्य, मोहनदास (सम्पादित) *''बाबा साहब अम्बेडकर : सम्पूर्ण वाड.मय''* खण्ड 8, द्वितीय संस्करण अक्टूबर, 1996।